



टिकाऊ कृषि हेतु प्रभावी प्राकृतिक खेती

सुशील कुमार शर्मा, नारायण साहू, विनोद कुमार वासनिक, ललित लक्ष्मण खरबीकर और अनिल दीक्षित

प्राकृतिक खेती स्थानीय संसाधनों के उपयोग, मृदा स्वास्थ्य के संरक्षण और खेती की लागत कम करने की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में उभर रही है। इसमें रासायनिक आदानों पर निर्भरता कम करते हुए जैव आदानों, फसल अवशेष, आच्छादन और खेत में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग पर विशेष जोर दिया जाता है। वन एवं जैव विविधता से समृद्ध छत्तीसगढ़ में प्राकृतिक खेती के विस्तार की व्यापक संभावनाएं हैं। राज्य में बड़ी संख्या में लघु एवं सीमांत किसान होने के कारण कम लागत वाली यह कृषि पद्धति उनकी आजीविका को अधिक टिकाऊ बनाने में सहायक हो सकती है। हालांकि, प्राकृतिक खेती को व्यापक स्तर पर अपनाने के लिए गुणवत्तापूर्ण जैव आदान की उपलब्धता, तकनीकी जानकारी, उचित आच्छादन सामग्री और किसानों को निरंतर मार्गदर्शन जैसी चुनौतियों का समाधान भी आवश्यक है। ऐसे में स्थानीय संसाधनों का वैज्ञानिक उपयोग प्राकृतिक खेती को अधिक प्रभावी और व्यावहारिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

प्राकृतिक खेती की सफलता काफी हद तक खेत और उसके आसपास उपलब्ध स्थानीय संसाधनों के समुचित उपयोग पर निर्भर करती है। इसमें बाहरी रासायनिक आदानों पर निर्भरता कम करते हुए गोबर, गौमूत्र, गुड़, बेसन, स्थानीय मृदा, विभिन्न पौधों की पत्तियों तथा अन्य प्राकृतिक सामग्रियों से अनेक प्रकार के जैव आदान तैयार किए जाते हैं। इनका उपयोग बीज उपचार, पौध पोषण, मृदा की जैविक सक्रियता बढ़ाने तथा कीट एवं रोग प्रबंधन में किया जाता है। किसान इन जैव आदानों को स्थानीय स्तर पर तैयार कर भाकृअनुप-राष्ट्रीय जैविक तनाव प्रबंधन संस्थान, रायपुर (छत्तीसगढ़)

खेती की लागत कम करने के साथ फसल उत्पादन के लिए अनुकूल वातावरण बना सकते हैं।

प्राकृतिक खेती में उपयोग किए जाने वाले ऐसे विभिन्न जैव-आदानों की तैयारी और उपयोग की निम्न विधियां हैं:

बीजामृत

प्राकृतिक खेती में बीज उपचार के लिए बीजामृत का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 5 कि.ग्रा. गोबर, 5 लीटर गौमूत्र, 50 ग्राम चूना, 20 लीटर पानी और 50-100 ग्राम मृदा की आवश्यकता होती है। सबसे पहले गोबर को कपड़े की पोटली में बांधकर 20 लीटर पानी में 24 घंटे तक

डुबोकर रखा जाता है। इसके बाद पोटली निकालकर शेष सामग्री को घोल में अच्छी तरह मिलाया जाता है। तैयार बीजामृत में बीजों को डुबोकर उपचारित किया जाता है और कुछ घंटे छाया में सुखाने के बाद बुआई की जाती है। बीजामृत का उपयोग बीजों के बेहतर अंकुरण में सहायक होता है तथा मृदाजनित रोगों से बचाव में भी मदद करता है।

जीवामृत

प्राकृतिक खेती में उपयोग किया जाने वाला यह एक तरल जैव आदान है। इसे तैयार करने के लिए 100 लीटर पानी, 5 कि.ग्रा. देसी गाय का गोबर, 5 लीटर गौमूत्र, 500 ग्राम बरगद या पीपल के पेड़ के नीचे की

पलवार

प्राकृतिक खेती में पलवार का विशेष महत्व है। खेत की मृदा को फसल अवशेषों, पुआल अथवा जीवित फसलों से ढकने पर मृदा में नमी संरक्षित रहती है और पानी का वाष्पीकरण कम होता है। साथ ही, खरपतवारों की वृद्धि को नियंत्रित करने में भी सहायता मिलती है। पलवार के रूप में उपयोग किए गए जैविक पदार्थ धीरे-धीरे विघटित होकर मृदा में मिल जाते हैं, जिससे मृदा की संरचना और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार होता है तथा लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ावा मिलता है। इससे मृदा में वायु संचार और जल अवशोषण क्षमता बेहतर होती है। पलवार भूमि की सतह तक सूर्य का प्रकाश पहुंचने में बाधा उत्पन्न कर खरपतवारों के अंकुरण और वृद्धि को भी कम करती है। इससे फसल और खरपतवारों के बीच पानी, प्रकाश एवं पोषक तत्वों के लिए होने वाली प्रतिस्पर्धा कम होती है। प्राकृतिक खेती में मुख्य रूप से निम्न तीन प्रकार के आच्छादन अपनाए जाते हैं:

- **मृदा आच्छादन:** मृदा में कम से कम हस्तक्षेप करते हुए लगभग 10-15 सें.मी. की उथली जुताई की जाती है।
- **पुआल/फसल अवशेष आच्छादन:** पिछली फसल के सूखे अवशेषों, पुआल अथवा भूसे को लगभग 5-7 टन प्रति हैक्टर की दर से खेत की सतह पर फैलाया जाता है।
- **जीवित आच्छादन:** मुख्य फसल की पत्तियों के बीच मूंग, उड़द, सोयाबीन और लोबिया जैसी दलहनी फसलों को अंतरफसल अथवा मिश्रित फसल के रूप में उगाया जाता है। इससे भूमि आच्छादित रहने के साथ उपलब्ध संसाधनों का बेहतर उपयोग करने में सहायता मिलती है।

मृदा, 1 कि.ग्रा. गुड़ और 1 कि.ग्रा. बेसन की आवश्यकता होती है। इसे तैयार करने के लिए सबसे पहले गोबर को गौमूत्र में अच्छी तरह मिलाया जाता है। इसके बाद गुड़ और बेसन का घोल बनाकर सभी सामग्रियों को 100 लीटर पानी में मिला दिया जाता है।

अग्निअस्त्र

प्राकृतिक खेती में कीट प्रबंधन के लिए अग्निअस्त्र का उपयोग प्राकृतिक कीटनाशी के रूप में किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 20 लीटर गौमूत्र, 5 कि.ग्रा. नीम की पत्तियों की चटनी, 0.5 कि.ग्रा. तंबाकू, 0.5 कि.ग्रा. तीखी हरी मिर्च और 500 ग्राम लहसुन की चटनी की आवश्यकता होती है। सभी सामग्रियों को मृदा के बर्तन में डालकर चार बार उबाला जाता है। इसके बाद मिश्रण को 48 घंटे तक छाया में रखकर छान लिया जाता है। तैयार अग्निअस्त्र की 5 लीटर मात्रा को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव किया जा सकता है। इसका उपयोग तना एवं फल छेदक इल्लियों के प्रबंधन में किया जाता है। तैयार अग्निअस्त्र को तीन माह तक भंडारित किया जा सकता है।



अग्निअस्त्र बनाने की विधि

तैयार मिश्रण को जूट की बोरी से ढककर 4-6 दिनों तक रखा जाता है और इस दौरान सुबह-शाम लकड़ी की सहायता से अच्छी तरह चलाया जाता है। तैयार जीवामृत को छानकर लगभग 0.5 एकड़ क्षेत्र में सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग किया जा सकता है। सूखे खेत में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। जीवामृत मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों और केंचुओं की सक्रियता बढ़ाने में सहायक होता है तथा पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूल मृदा वातावरण तैयार करता है।

घनजीवामृत

यह जीवामृत का ठोस स्वरूप है। इसे तैयार करने के लिए 100 कि.ग्रा. देसी गाय का गोबर, 2 लीटर गौमूत्र, 0.5-1 कि.ग्रा. पेड़ के नीचे की मृदा, 1 कि.ग्रा. गुड़ और 1 कि.ग्रा. बेसन की आवश्यकता होती है। इसे तैयार करने के लिए सबसे पहले पॉलीथीन शीट पर गोबर फैलाकर उसमें मौजूद अवांछित पदार्थों को निकाल दिया जाता है। इसके बाद शेष सभी सामग्रियों को गोबर में मिलाकर आटे की तरह गूथ लिया जाता है।

तैयार मिश्रण को बोरी से ढककर तीन दिनों तक नमी बनाए रखते हुए रखा जाता है। इसके बाद मिश्रण के छोटे-छोटे गोले बनाकर 7-10 दिनों तक छाया में सुखाया जाता है। तैयार घनजीवामृत को छह महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है। बुआई के समय इसका प्रयोग 70-80 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से किया जा सकता है। इसके उपयोग से बाहरी

आदानों पर निर्भरता और उत्पादन लागत कम करने के साथ मृदा की जैविक सक्रियता एवं उर्वरता बढ़ाने में सहायता मिलती है।

ब्रह्मास्त्र

प्राकृतिक खेती में बड़ी इल्लियों के प्रबंधन के लिए ब्रह्मास्त्र का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 10 लीटर गौमूत्र तथा नीम, करंज, सीताफल, बेल, अरंडी और धतूरा आदि में से किन्हीं पांच पौधों की पत्तियों का उपयोग किया जाता है। इसमें नीम की 3 कि.ग्रा. तथा अन्य चयनित पौधों की 2-2 कि.ग्रा. पत्तियों की चटनी तैयार कर गौमूत्र में मिलाई जाती है। इस मिश्रण को अच्छी तरह उबालने के बाद 48 घंटे तक छाया में ठंडा होने के लिए रखा जाता है और फिर छान लिया जाता है। तैयार ब्रह्मास्त्र की 3 लीटर मात्रा को 100 लीटर पानी में मिलाकर 15-21 दिनों के अंतराल पर छिड़काव किया जा सकता है। इसे छह माह तक सुरक्षित रूप से भंडारित किया जा सकता है।

नीमास्त्र

प्राकृतिक खेती में रस चूसक कीटों और छोटी इल्लियों के प्रबंधन के लिए नीमास्त्र का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 5 कि.ग्रा. नीम की पत्तियां, 5 लीटर गौमूत्र, 1 कि.ग्रा. गोबर और 100 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। सभी सामग्रियों को अच्छी तरह मिलाकर मिश्रण को जालीदार कपड़े से ढककर 48 घंटे तक रखा जाता है। इस दौरान मिश्रण को दिन में चार बार अच्छी तरह चलाया

जाता है। इसके बाद तैयार नीमास्त्र को छान लिया जाता है। इसका प्रयोग बिना पानी मिलाए 100 लीटर प्रति एकड़ की दर से सीधे फसल पर छिड़काव के रूप में किया जा सकता है।

पंचगव्य

प्राकृतिक खेती में पौधों की वृद्धि एवं संरक्षण के लिए पंचगव्य का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 2 लीटर गाय का दूध, 2 लीटर दही, 3 लीटर गौमूत्र, 500 ग्राम घी, 5 कि.ग्रा. ताजा गोबर, 3 लीटर गन्ने का रस, 3 लीटर नारियल पानी और 12 पके केले

सारणी: दशपर्णी अर्क तैयार करने के लिए आवश्यक सामग्री एवं मात्रा

सामग्री	मात्रा
पानी	200 लीटर
गौमूत्र	20 लीटर
गोबर	2 कि.ग्रा.
हल्दी	500 ग्राम
हींग	10 ग्राम
तंबाकू की पत्तियां	1 कि.ग्रा.
लहसुन	500 ग्राम
मिर्च	1 कि.ग्रा.
लहसुन	500 ग्राम
अदरक	200 ग्राम
करेले की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
नीम की पत्तियां	3 कि.ग्रा.
धतूरे की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
करंज की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
सीताफल की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
आम की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
अरंडी की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
बबूल की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
अमरूद की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
महुआ की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
तुलसी की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
बेल की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
पपीते की पत्तियां	2 कि.ग्रा.

दशपर्णी अर्क

प्राकृतिक खेती में विभिन्न प्रकार के कीटों एवं रोगों के प्रबंधन के लिए दशपर्णी अर्क का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 200 लीटर पानी, 20 लीटर गौमूत्र, 2 कि.ग्रा. गोबर, 500 ग्राम हल्दी, 10 ग्राम हींग, 1 कि.ग्रा. तंबाकू, 1 कि.ग्रा. मिर्च, 500 ग्राम लहसुन, 400 ग्राम अदरक तथा 10 प्रकार की पत्तियों के पेस्ट की आवश्यकता होती है। इसे तैयार करने की प्रक्रिया लगभग 30-40 दिनों की होती है। इस दौरान विभिन्न सामग्रियों को निर्धारित क्रम में मिलाकर किण्वन के लिए रखा जाता है तथा मिश्रण को प्रतिदिन सुबह-शाम अच्छी तरह चलाया जाता है। तैयार दशपर्णी अर्क की 6-8 लीटर मात्रा को 200 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव किया जा सकता है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के कीटों एवं रोगों के प्रबंधन में सहायक होता है।



दशपर्णी अर्क बनाने की क्रिया



की आवश्यकता होती है। सबसे पहले गोबर, गौमूत्र और घी को मृदा के बर्तन में मिलाकर तीन दिनों तक नियमित रूप से चलाया जाता है। चौथे दिनों इसमें शेष सामग्री मिलाकर मिश्रण को 15 दिनों तक छाया में रखा जाता है और प्रतिदिन अच्छी तरह चलाया जाता है। मिश्रण में किण्वन होने और विशिष्ट गंध आने पर पंचगव्य तैयार माना जाता है। तैयार पंचगव्य की 250 ग्राम मात्रा को 10 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव किया जा सकता है। इसका प्रयोग पौधों की वृद्धि तथा फसल की उपज और गुणवत्ता में सुधार के लिए किया जाता है।

खट्टी छाछ

प्राकृतिक खेती में फफूंदजनित रोगों के प्रबंधन के लिए खट्टी छाछ का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए गाय के दूध को गर्म करने के बाद ठंडा करके दही

सफल कृषक

प्राकृतिक खेती और पशुपालन का समन्वय भी किसानों के लिए उपयोगी साबित हो रहा है। धमतरी जिले के किसान श्री रमन लाल साहू गोवंश से प्राप्त गोबर एवं गौमूत्र का उपयोग प्राकृतिक खेती में कर रहे हैं। इन्होंने गोवंश के लिए पानी की व्यवस्था हेतु खेत में छोटा तालाब बनाया है। पीएम-कुसुम योजना के तहत प्राप्त सौर पंप और गोबर गैस संयंत्र से वे कृषि एवं घरेलू जरूरतों को भी पूरा कर रहे हैं। साथ ही अन्य किसानों को प्राकृतिक खेती अपनाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

जमाया जाता है। तैयार दही को 5-6 दिनों तक रखने के बाद अच्छी तरह मथकर मट्ठा अलग कर लिया जाता है। तैयार खट्टे-मट्ठे की 6 लीटर मात्रा को 100 लीटर पानी में मिलाकर फसल में फूल आने की अवस्था में छिड़काव किया जा सकता है। इसका प्रयोग फफूंदजनित रोगों के प्रबंधन में सहायक होता है और फसल की बेहतर वृद्धि एवं उपज में योगदान कर सकता है।

प्राकृतिक खेती की अपार संभावनाएं

छत्तीसगढ़ में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन प्राकृतिक खेती के विस्तार के लिए अनुकूल आधार प्रदान करते हैं। राज्य की समृद्ध जैव विविधता, वर्षा आधारित कृषि क्षेत्र और पर्याप्त



प्राकृतिक खेती के उपयोगी घटक

पशुधन संसाधन इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। गोबर एवं गौमूत्र जैसे स्थानीय संसाधनों का जैव-आदान तैयार करने में उपयोग कर बाहरी आदानों पर निर्भरता और खेती की लागत कम करने के साथ मृदा स्वास्थ्य में सुधार किया जा सकता है।

राष्ट्रीय प्राकृतिक खेती मिशन के तहत छत्तीसगढ़ में 307 जैव-आदान संसाधन केंद्र (बीआरसी) स्थापित करने का प्रस्ताव है। बस्तर, सरगुजा, मुंगेली और दंतेवाड़ा सहित विभिन्न जिलों में इनके लिए आवेदन आमंत्रित किए जा रहे हैं। वहीं गरियाबंद, बीजापुर, सुकमा, दंतेवाड़ा और नारायणपुर को पूर्ण जैविक जिला घोषित किया गया है तथा शेष जिलों में भी एक-एक विकास खंड को पूर्ण जैविक बनाने का कार्यक्रम चल रहा है।

छत्तीसगढ़ की सुगंधित धान किस्में 'जीराफुल' और 'नगरी दुबराज' भी प्राकृतिक खेती के लिए महत्वपूर्ण संभावनाएं प्रस्तुत करती हैं। जीरे जैसी सुगंध वाला 'जीराफुल' मुख्य रूप से सरगुजा संभाग और 'नगरी दुबराज' धमतरी क्षेत्र में उगाया जाता है। दोनों को भौगोलिक संकेतक (जीआई) टैग प्राप्त है। प्राकृतिक खेती की पद्धतियों से इन किस्मों की उत्पादन लागत कम करने तथा गुणवत्तापूर्ण उपज के माध्यम से किसानों की आय बढ़ाने की संभावनाएं हैं।

चुनौतियों का समाधान

प्राकृतिक खेती के विस्तार में कई व्यावहारिक चुनौतियां भी सामने आती हैं।



मृदा पोषण में लाभकारी जीवामृत

किसानों में इसकी तकनीकों से संबंधित व्यावहारिक जानकारी और प्रशिक्षण की कमी प्रमुख चुनौती है। शुरुआती वर्षों में उपज में कमी की आशंका के कारण भी कई किसान इसे अपनाने में संकोच करते हैं। इसके अलावा, गुणवत्तापूर्ण जैव-आदान और उपयुक्त बीजों की उपलब्धता, प्राकृतिक उत्पादों के लिए संगठित बाजार, उचित प्रमाणीकरण तथा मानकीकरण की कमी के कारण किसानों को उपज का अपेक्षित मूल्य प्राप्त करने में कठिनाई हो सकती है।

पशुओं के उपचार में प्रयुक्त कुछ औषधियों के अवशेष गोबर और गौमूत्र में पाए जाने की संभावना भी जैव-आदान की गुणवत्ता के संदर्भ में ध्यान देने योग्य विषय है। इसलिए जैव-आदान तैयार करते समय गुणवत्तापूर्ण एवं सुरक्षित सामग्री का उपयोग

आवश्यक है। प्राकृतिक विधियों से तैयार कीट एवं रोग प्रबंधन उत्पादों का प्रभाव कई परिस्थितियों में अपेक्षाकृत धीरे दिखाई दे सकता है, इसलिए फसल की नियमित निगरानी और समय पर निवारक उपाय महत्वपूर्ण होते हैं।

छत्तीसगढ़ में छोटे एवं सीमांत किसानों की अधिक संख्या को देखते हुए प्राकृतिक खेती को व्यापक स्तर पर अपनाने के लिए प्रशिक्षण, तकनीकी मार्गदर्शन, स्थानीय स्तर पर जैव-आदान की उपलब्धता और प्रभावी विपणन व्यवस्था को मजबूत करना आवश्यक है। इसके साथ ही उच्च मूल्य वाली उपयुक्त फसलों का चयन और स्थानीय मूल्य श्रृंखला का विकास प्राकृतिक खेती को किसानों के लिए अधिक लाभकारी एवं टिकाऊ बनाने में सहायक हो सकता है।

मिशन जीरो बर्निंग



फसल अवशेष जलाना उत्तर-पश्चिम भारत, विशेषकर पंजाब में, लंबे समय से गंभीर पर्यावरणीय और कृषि संबंधी चुनौती रहा है। इसके समाधान के लिए स्व-स्थाने फसल अवशेष प्रबंधन (सीआरएम) को बढ़ावा देते हुए प्रौद्योगिकी प्रदर्शन, प्रशिक्षण, जन-जागरूकता और सामुदायिक सहभागिता पर विशेष जोर दिया गया।

वर्ष 2024-25 के दौरान 3,244 हैक्टर क्षेत्र में सीआरएम प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन किया गया, जिसमें 3,200 से अधिक किसान प्रत्यक्ष रूप से शामिल हुए। इसके अतिरिक्त, अध्ययन दौरो और प्रक्षेत्र कार्यक्रमों के माध्यम से हजारों किसानों को जोड़ा गया। कुल 206 जागरूकता कार्यक्रमों से लगभग 17,000 किसान लाभान्वित हुए, जबकि किसानों और मशीन संचालकों के लिए 40 प्रशिक्षण

कार्यक्रम आयोजित किए गए। विद्यार्थियों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए 82 विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर के कार्यक्रम आयोजित किए गए, जिनसे 13,000 से अधिक विद्यार्थियों को सतत फसल अवशेष प्रबंधन के प्रति जागरूक किया गया।

इस अभियान के प्रसार के लिए समाचार पत्र, वैज्ञानिक लेख, होर्डिंग्स, पोस्टर, दीवार लेखन, पम्फलेट, टीवी कार्यक्रम, व्हाट्सएप समूह, एम-किसान परामर्श और यूट्यूब जैसे

संचार माध्यमों का व्यापक उपयोग किया गया। इन समन्वित प्रयासों से पराली जलाने की घटनाओं में उल्लेखनीय कमी आई। पंजाब में वर्ष 2025 में 2023 की तुलना में लगभग 93 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई।

सीआरएम तकनीकों को अपनाने से आर्थिक और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में भी लाभ हुआ। वर्ष 2024-25 में खेती की लागत में लगभग 538 करोड़ रुपये की बचत हुई, मृदा में 495 करोड़ रुपये मूल्य के पोषक तत्व संरक्षित रहे तथा लगभग 571 मिलियन घन मीटर भूजल की बचत हुई। पंजाब का 'मिशन जीरो बर्निंग' अनुभव यह दर्शाता है कि तकनीक, प्रशिक्षण और जनभागीदारी के समन्वय से सतत एवं जलवायु-अनुकूल कृषि को प्रभावी रूप से बढ़ावा दिया जा सकता है।

(स्रोत: भाकृअनुप वार्षिक रिपोर्ट 2025-26)